शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

- चित्रलेखा अंशु

सामाजिक व्यवस्था में आने वाले ठहराव को स्थगित करने के उपक्रम में नवीन दृष्टि सर्वथा उपादेय होती है। स्त्री अस्मिता के नये संदर्भ पारंपरिक सामाजिक संरचना में महिलाओं की दशा-दिशा पर कुछ नए प्रश्न खड़े करते हैं। प्रस्तुत शोध अध्ययन मिथिला क्षेत्र के कुछ प्रथाओं का समाज शास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

विषय संकेतः- स्त्री अध्ययन, मिथिला संस्कृति, सामाजिक परिवर्तन, ग्राम्शी, सांस्कृतिक वर्चस्ववाद

स्त्री अध्ययन विषय के संदर्भ में अंतोनियो ग्रम्शी के सिद्धांत के साथ इसे जोड़ना एक अद्भुत आर वस्तिदायक बात है। और ग्राम्शी को ही चुनना जबकि स्त्री विषयक चिंतन से ओतप्रोत और भी विद्वान यहाँ मौजूद हैं। तो हमें मर्क्सवादी इतिहासकार ई. जे. हाब्सबॉम का कथन याद आता है कि, 'ग्राम्शी पश्चिमी युरोप में बीसवीं सदी के सम्भवतः सर्वाधिक मौलिक साम्यवादी विचरक थे'। कुछ लोगों के हवाले से वे कहते हैं कि, 'ग्राम्शी उग्रवादी साम्यवाद के ऐसे प्रतिनिधि हैं जिनके व्यक्तित्व और कृत्त्वि में विचार और आचरण की अद्भुत एकता है'।[1] अतः ग्राम्शी अपने विचार तथा व्यवहार दोनों में समानता रखने वाले विद्वान थे। उनके द्वारा स्त्रियों की पराधीनता का प्रश्न Hegemony से स्पष्ट होता है। ग्राम्शी अपने 'सांस्कृतिक वर्चस्ववाद' के सिद्धांत में यह स्पष्ट करते हैं कि, 'उत्पीड़ितों (स्त्रियों) के अवचेतन में शोषकों के द्वारा दवाब बनाकर सहमति अर्जित की जाती है'।

यह सिद्धांत संपूर्ण महिला वर्ग पर लागू होती है। मिथिला समाज की महिलाएँ भी इनसे अलग नहीं है इस शोध में मिथिला के दरभंगा जिले की महिलाओं का संदर्भ लिया गया है। तथा अंतोनियो ग्राम्शी के सिद्धांत की कसौटी पर इसे परखने की कोशिश की गई है क्योंकि ग्राम्शी के सिद्धांत और मिथिला की महिलाऐं दोनों के बीच समानता है। दोनों के बीच के संबंधों का पता लगाने के लिए इस क्षेत्र का सर्वेक्षण किया गया। द्वितीयक स्रोतों को इकठ्ठा किया गया तथा जो जानकारी हमारे सामने है वह मुख्य है। सर्वेक्षण के पश्चात इस सिद्धांत के संदर्भ में मिथिला समाज की वस्तुस्थिति तथा वर्चस्व के कारणों से हमारा परिचय होगा तथा दोनों स्थितियों की सही व्याख्या करने में हम सक्षम होंगे।

सिद्धांत

अन्तोनियो ग्राम्शी ने सांस्कृतिक वर्चस्ववाद का सिद्धांत प्रतिपादित किया है। ग्राम्शी ने मार्क्सवादी विचारधारा के बुर्जुआ के सर्वहारा पर वर्चस्व के सिद्धांत को सांस्कृतिक वर्चस्ववाद से जोड़ा है। इस सिद्धांत में वर्चस्व की अवधारणा के सांस्कृतिक, पारंपरिक तथा नैतिक आयामों पर ग्राम्शी अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं। ग्राम्शी कहते हैं कि 'राज्य स्वयं वर्चस्व या नेतृत्व का प्रतीक है जो अपने नागरिक के ऊपर वर्चस्व स्थापित करता है, संरक्षित करता है तथा उसका विस्तार भी करता है'।

'ग्राम्शी मार्क्सवादी परंपरा का ऐसा मौलिक विचारक था जिसके लेखन में स्तालिनवादी नीतियों और कोमिंटर्न संचालित कम्युनिस्ट आंदोलन की कठोर और सटीक समीक्षा सन्निहित थी'।[2]

ग्राम्शी के सांस्कृतिक वर्चस्ववाद की अवधारणा को विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित रूप से स्पष्ट किया है:-

टेरी इगेल्टन के अनुसार, 'ग्राम्शी ने शासन और वर्चस्व की अवधारणाओं में अंतर स्थापित किया है। शासन राजनैतिक रूपों तथा सीधे और प्रभावी बलप्रयोग की स्थितियों में व्यक्त होता है। किन्तु एक सामान्य

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

स्थिति यह है कि राजनैतिक सामाजिक और संश्लिष्ट अंतर्ग्रंथित एक भिन्न संदर्भ में या तो 'वर्चस्व' यह है या फिर वे सक्रिय सामाजिक एवं सांस्कृतिक शक्तियाँ है जो कि इसके आवश्यक घटक हैं।

जैसा कि यह तथ्य स्पष्ट है कि (Hegemony) चूँकि संपूर्ण सामाजिक प्रक्रिया शक्ति और प्रभाव का विशिष्ट विस्तार है। यह कहना कि मनुष्य अपने समस्त जीवन को परिभाषित और स्वरूप प्रदान करता है केवल एक वायवीय सत्य है। एक दृश्यमान समाज में साधनों एवं संपत्तियों के बीच विशिष्ट असमानताऐं पाई जाती है, जोकि इस प्रक्रिया (Hegemony) के अंतर्गत आती है। वर्गीय समाज में वर्गों के बीच अनेक प्राथमिक असमानताऐं होती हैं। जबकि ग्राम्शी ने आधिपत्य और अधीनस्थता की दो श्रेणियां प्रस्तुत की जोकि इस पूरी प्रक्रिया में उभरकर सामाने आती है'।[3]

'लुकास ने अपनी लेखनी में पश्चिमी मार्क्सवादी मित्र के विचारधारा को (Hegemony) की संज्ञा दी है। ग्राम्शी साधारणतया अपने (Hegemony) शब्द को इस तरह परिभाषित करते हैं कि शासक वर्ग अपने सत्ता के माध्यम से शासितों से सहमति विजित करता है। यद्यपि यह भी सत्य है कि कभी-कभो इस शब्द को सहमति तथा दबाव दोनों अर्थों में इस्तेमाल करता है। हालांकि विचारधारा (से इसका तात्विक भेद है क्योंकि विचारधाराएँ बलपूर्वक थोपी जा सकती हैं। किन्तु (Hegemony) विचारधारा से बड़ी कोटि है। जिसमें विचारधारा तो शामिल है ही लेकिन इसे (Ideology) ही कहेंगे।[4]

ग्राम्शी ने सांस्कृतिक वर्चस्ववाद की अवधारणा का सूत्रीकरण करते हुए यह मत प्रस्तुत किया कि शासकों और शासितों के बीच वर्चस्व और प्रतिरोध का वास्तविक संघर्ष अधिरचना के दायरे में होता है। अधिरचना को उन्होंने नागरिक समाज और राजनीतिक समाज दो स्तरों में बाँटा और कहा कि व्यवस्थाएँ बल-प्रयोग और सहमति दोनों के संयुक्ताधार पर टिकी होती है। राजनीतिक समाज यानी राज्य और उसके तमाम अंग बल-प्रयोग का स्थल है जबकि नागरिक समाज (परिवार, धर्म-संस्थान, शिक्षा-संस्थान, संस्कृति आदि) तमाम गैर-राजनीतिक और गैर आर्थिक सहमति का।

'इस बात को भी 'पश्चिमी आक्रमण' के मुद्दों तक महदूद नहीं करना चाहिए। इसकी कई वजहें हैं। पहली बात तो यह है कि यहाँ सिर्फ साम्राज्यवाद के प्रत्यक्ष 'दबाव' से वास्ता नहीं है। बल्कि एक बेदिमाग और निर्भर बुर्जुवा की सांस्कृतिक प्रेरणाआं से भी है। भूमंडलीकरण तकनीकें उनकी मदद करती हैं, अगर भारत की वर्चस्वशाली संस्कृति के भूमंडलीकृत जन संस्कृति में बिलियन के बिचौलिए भारतीय अर्थव्यवस्था को विदेशी वित्तीय पूँजी के प्रभुत्व लानेवालों की तरह ही खुद भारतीय हैं-या ज्यादा सही ढंग से कहें तो भारतीयों का खास वर्ग-जो खुद साम्राज्यवाद का लाभ उठाने वालों में से एक है और जो भारत के सांस्कृतिक उत्पादन को मेट्रोपोलिटन देशों की जन संस्कृति की तर्ज पर गढ़ना चाहता है'।[5]

खासतौर से ब्यूरोक्रेसी, एक्जिक्युटिव क्लास, प्रबंधक वर्ग, अवसरवादी बुद्धिजीवी तथा नान गवर्नमैंटल ऑर्गेनाईजेशन से जुड़े वर्ग अपने फायदे के लिए विकसित देशों के इस सांस्कृतिक वर्चस्व की नीति' को तरजीह दे रहे हैं।

ग्राम्शी के विचार एवं मिथिला की महिलाऐं

उमा चक्रवर्ती अपने आलेख 'पितृसत्ता पर एक नोट' में यह बात स्पष्ट करती हैं कि, 'जिन महिलाओं पर धर्म, माइथोलॉजी और कानून के सांस्कृतिक मॉडलों का पूरा प्रभाव रहता है। महिलाओं में पैतृकवाद की विचारधारा बड़ी जल्दी रचना स्थान बना लेती है'।[6] मिथिला समाज संस्कृत शिक्षा का गढ़ रह चुका है। इसलिए धर्म से जुड़ी हुई पुस्तकों का प्रभाव वहाँ अधिक है क्योंकि जितने भी धार्मिक ग्रन्थ होते हैं वह संस्कृत भाषा में ही होते हैं और संस्कृत परंपरा को महत्त्व देते हैं। दूसरा प्रभाव 'पंजी प्रबंध' का रहा है, जिसमें स्त्री के ऊपर यह दबाव रहता है कि वर्ग तथा जाति व्यवस्था की जिम्मेदारी सफलता पूर्वक निर्वाह करेंगी। अन्य स्थानों की तरह ही मिथिला की महिलाऐं भी अपनी ही जाति में विवाह करने को प्रतिबद्ध हैं। यहाँ भी उन पर दबाव डालकर सहमति हासिल की जाती है।

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

यहाँ की महिलाएँ धार्मिक बातों पर गहरी संवेदना रखती हैं। क्योंकि ऐसी स्त्रियाँ 'पतिव्रता' की श्रेणी में आती हैं। यहाँ पर पुरुषों का समाजीकरण ऐसा हुआ है कि वह अपने विचार से पतिव्रता नारियों की तथा रक्त की शुद्धता बनाये रखने वाली नारियों की प्रशंसा करते हैं। यह भी वर्चस्व का एक तरीका है जहाँ स्त्रियों पर पतिव्रता बनकर पतियों की भलाई स्वरूप विभिन्न प्रथाओं का अनुसरण करने के लिए दबाव बनाया जाता है तथा सहमति ली जाती है। यहाँ की महिलाऐं व्रत-त्योहार में इतनी खोई रहती हैं कि अपने अस्त्तित्व को भूल जाती हैं और सोचती है कि वह इसी लायक हैं।

'पितृसत्तात्मक वर्चस्व एक व्यवस्था के रूप में किस प्रकार से काम करती है, उसके लिए विचारधारा का बहुत अधिक महत्त्व है। विचारधारा की अहमियत हमें गर्डा लर्नर द्वारा उठाए गए केन्द्रीय मुद्दे की ओर ले जाती है (पितृसत्ता की व्यवस्था को सदियों तक अक्षुण्ण बनाये रखने में महिलाओं का 'सहयोग', विचारधारा के तौर पर पितृसत्ता के व्यवस्था के दो पहलू हैं। (एक, यह सहमति उत्पन्न करती है (महिलाएँ 'पितृसत्ता के बने रहने में 'सहायता' देती हैं, क्योंकि वह पुरुष वर्चस्व की विचारधाराओं को आत्मसात करने के माध्यम से उसके प्रति अपनी सहमति प्रदान करती हैं। 'सहयोग' या मिली भगत (Complicity), को सहमति के रूप में कई तरीकों से प्राप्त किया जाता रहा है, (उत्पादक संसाधनों तक पहुँच का न होना और परिवार के पुरुष मुखिया पर आर्थिक निर्भरता, (उच्चवर्ग की अनुकरणशील और निर्भर महिलाओं को मिलने वाली विशेषाधिकार और सम्मान, पुरुष श्रेष्ठता और या भिन्न कार्य क्षेत्रों की विचारधाराऐं, और पितृसत्ताओं की विचारधाराओं और रीति-रिवाजों के विरोध की स्थिति में बलप्रयोग का भय बगैरह। इस प्रकार सहयोग या सहमति एक तरह से उगलवा ली जाती थी न कि स्वेच्छा से दी जाती थी, क्योंकि भौतिक संरचनाओं में महिलाओं को पराश्रित पात्र के रूप में बाहर निकाल दिया जाता था। इस प्रकार एक बार महिलाओं को वंचित कर देने से उनका सहयोग प्राप्त करना आसान हो जाता है क्योंकि जो व्यवस्था का अनुकरण करने लगती हैं उन्हें न केवल वर्गीय सुविधाऐं मिलने लगती हैं। बल्कि मान-सम्मान के तमगों से भी नवाजा जाता है। इस प्रकार, जो स्त्रियाँ पितृसत्ता के कायदे-कानूनों और, तौर-तरीकों को अपना सहयोग या सहमति नहीं देती हैं, उन्हें पथभ्रष्ट (Deviant) करार दे दिया जाता है, और इन्हें उनके पुरुषों के भौतिक संसाधनों के उपभोग से बेदखल किया जा सकता है। इस प्रकार सम्मानित और पथभ्रष्ट के बीच विभाजन महिलाओं को एक दूसरे से काट देता है जबकि वह पहले से ही वर्गों के स्तर पर बँटी हुई भी हो सकती हैं। सम्पत्तिशाली वर्गों के स्त्री पुरुषों के समूह में स्त्रियों को एक और तरीके से भी पुरस्कृत किया जाता है। पैतृकवादी वर्चस्व के तहत स्त्री और पुरुषों के परस्पर दायित्व इस प्रकार करते हैं कि स्त्री की यौन, आर्थिक, राजनीतिक, और बौद्धिक अधीनता के बदले में उन्हें निचले वर्गों के स्त्री और पुरुषों का शोषण करने की शक्ति में पुरुषों के साथ हिस्सेदारी मिल जाती है'।[7]

मिथिला में ब्राह्मणवादी वर्चस्व

मिथिला इतिहास के उस प्राचीन कालखंड से ही संस्कृत शिक्षा का केन्द्र रहा है। संभवत: यहाँ के समाज में सनातन धर्म का अनुपालन काफी दृढ़ता से होता आया है'।[8] यही कारण है कि मैथिल जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में धर्मशास्त्र प्रभावी रहा है। यहाँ के निवासियों के खान-पान, रहन सहन, आचार-व्यवहार का ऐसा कोई भी बिन्दु नहीं है, जहाँ धर्मशास्त्र की उपस्थिति नहीं हो अर्थात धर्म और धर्मशास्त्रीय संस्कार से यहाँ की आम मानसिकता प्रभावित है। 'संस्कृत शिक्षा के वाहक मूल रूपेण यहाँ के 'मैथिल ब्राह्मण' रहे हैं। यही वह कारण है कि संस्कृत भाषा में प्रचलित तथा धर्मशास्त्रीय ग्रंथों के अनुशीलक और अनुसरण-कर्ता भी विशेष रूप से यही जाति रही। चूँकि धर्म के संस्थापक और धर्मग्रंथ के रचयिता भी पुरुष ही रहे (अत: उन्होंने ऐसी व्यवस्था को स्वीकृति दी, जो स्त्री के स्वतंत्र अस्त्तित्व की सहमति प्रदान नहों करे'।[9]

'भारत के अन्य भागों के समान ही मिथिलांचल में भी बौद्ध -धर्म ने अपने पैर फैलाने की भरपूर कोशिश की थी। ग्यारहवी शताब्दी में इस्लाम केन्द्रित संस्कृति का आक्रमण हुआ'।[10] विदेशी सम्राट एवं आक्रमणकारी भी मैथिल संस्कृति में सेंधमारी को उत्सुक थे। अत: इतर अपसंस्कृति में मैथिल संस्कृति के

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

रक्षार्थ कर्णाट शासक 'हरिसिंहदेव' ने मैथिल विद्वानों की सहयोग से तेरहवीं शताब्दी में मैथिल ब्राह्मणों के वैवाहिक उद्देश्य की पूर्ति हेतु 'पंजी-प्रबंध'[11] नामक व्यवस्था का सूत्रपात किया जिसके अतर्गत मैथिल ब्राह्मणों का चारित्रिक और धार्मिक संस्कारों के आधार पर कई श्रेणियों में विभक्त किया गया। 'पंजी-प्रबंध' ब्राह्मणों के मूल एवं गोत्रों के पंजीकरण की व्यवस्था थी। जिसमें मूल स्रोतों एवं गोत्रों की प्रस्थापना की गई।

कालांतर में मैथिल समाज पर इसके कई घातक परिणाम हुए। जिसका सबसे बड़ा मूल्य स्त्रियों को चुकाना पड़ा। 'पंजी-प्रबंध' की नई धार्मिक अनुष्ठानिक एवं कर्मकाण्डीय व्यवस्था ने मैथिलों को घोर रूढ़िवादी, परम्परावादी एवं संकीर्ण बना दिया। भारत के अन्य भागों में ब्राह्मणवादी वर्चस्व कायम होने के फलस्वरूप स्त्रियों पर जितने बंधन लगाए गए, वे ही सब बंधन मिथिला में भी लगाए गए। पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह, विधवा-विवाह वर्जन, बेमेल-विवाह, बहुविवाह, बहुपत्नी विवाह इत्यादि प्रथाएँ यहाँ भी देखने को मिली। 'मैथिल ब्राह्मणों में विधवाओं की संख्या में अनापेक्षित इजाफा हुआ। विधवा प्रथा न वैश्या-वृत्ति को जन्म दिया। पंजी-प्रबंध के कारण आयी 'कुलीन' की प्रथा ने 'दहेज' के द्वार खोल दिए। पर्दा-प्रथा व बाल-विवाह ने नारियों को शिक्षा के प्रकाश से दूर कर दिया। रजस्वला होने के पूर्व ही विवाहित कन्याओं को पति की इच्छा के विरूद्ध कोई भी कार्य नहीं करना था। उन्हें इस कठोर सामाजिक नियम के विरुद्ध मौखिक और कार्यिक विरोध का अधिकार नहीं था। भावना-आहत ऐसी स्त्री स्वयं में टूटती और आँसू बहाती रहती थी'।[12]

पंजी प्रबंध और मैथिल ब्राह्मण

'चौदहवीं शताब्दी में कर्णाट वंशीय मिथिला के शासक हरिसिंह देव की अध्यक्षता में विद्वानों की मंडली ने मैथिल ब्राह्मण और कर्ण कायस्थ के विवाह संस्कार हेतु ''पंजी प्रबंध'' की व्यवस्था प्रारंभ की'।[13] इस व्यवस्था के अंतर्गत मैथिल ब्राह्मणों को उनके धर्म-संस्कार, शिक्षा, आचरण इत्यादि के आधार पर क्रमशः चार श्रेणियों में विभक्त किया गया-यथा, श्रोत्रिय (अति विशिष्ट दर्जा), योग्य (विशिष्ट दर्जा), पंजीब (असाधारण), जयबार (साधारण)। इस व्यवस्था के अस्तित्व में आने के कारण बताये गये हैं, उनमें से प्रथम यह कि इतिहास के उस कालखंड में विदेशी राजाओं की घुसपैठ मिथिला प्रदेश में भी हो चुकी थी और उनकी योजना थी कि किसी तरह से वे भी ब्राह्मण बन जायें। दूसरा जो कारण 'मिथिला तत्त्व विमर्श'[14] में बताया गया है, वह यह कि शतघरा ग्राम निवासी हरिनाथ शर्मा नामक एक ब्राह्मण की पत्नी प्रतिदिन मुक्तिनाथ महादेव के दर्शनार्थ दूसरे ग्राम स्थित एक मंदिर में जाया करती थी। उस स्त्री के विषय में सर्वत्र यह दुष्प्रचार किया गया कि एक चाण्डाल ने मंदिर में जाकर उसके सतीत्व को नष्ट कर दिया है। उसने अपने बचाव में जन समुदाय से कहा कि चाण्डाल ने धर्मभ्रष्ट करने का प्रयास तो किया था। परन्तु वह शिव कृपा से बाल-बाल बच गई। उसके कथन पर विश्वास न कर उसकी अग्नि परीक्षा ली गई। धर्माध्यक्ष पंडित ने पीपल के पत्ते पर यह वाक्य लिखा-'नाहं चाण्डालगामिनी'। ऐसा कर पीपल के पत्ते को उसके हाथ पर रखकर अग्नि का गोला रख दिया गया। स्त्री का हाथ जल गया। इसी के साथ उसके ऊपर व्यभिचारिणी का आरोप मढ़ दिया गया। तदन्तर वह ब्राह्मणी विलाप करने लगी और अपने निष्पाप होने की दुहाई देने लगी। बात राजा तक पहुँची और उसके आदेश पर दूसरी बार उसकी अग्नि परीक्षा हुई। इस बार पीपल के पत्ते पर यह वाक्य लिखा गया-'नाहं स्वपतिव्यतिरिक्तचाण्डालगामिनी'। इस बार अग्नि के गोले ने हाथ को नहीं जलाया। ऐसा देखकर धर्माधिकारी ने उस स्त्री के निष्कलुष होने की घोषणा कर कहा कि इस स्त्री के पति में ही किसी कारण वश चाण्डालत्व दोष व्याप्त हो गया है। खोज करने पर पता चला कि हरिनाथ शर्मा का उस स्त्री के साथ अनाधिकार विवाह के कारण उनमें चाण्डालत्व आ गया है।

उपर्युक्त घटना से यह कयास लगाया गया कि यदि पंजी प्रबंध की व्यवस्था के द्वारा मैथिल ब्राह्मणों की वंशावली तैयार कर दी जाय तो भविष्य में उनकी रक्त शुद्धि बनी रहेगी। इसके लिए कुछ ऐसे ब्राह्मणों की वंशावली लेखन के लिए तैयार किया गया, जिन्हें ''पंजीकार'' कहा जाने लगा।[15] पूर्व कथित घटना से इस

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

बात का संकेत मिलता है कि वैदिक युग के समापन के पश्चात् समाज में नारी की दशा दयनीय हो चुकी थी। अपने सतीत्व की पवित्रता की अग्नि परीक्षा देना वस्तुत: पुरुष वर्चस्व के प्रभाव को ही परिपुष्ट करता है।

महामहोपाध्याय परमेश्वर झा अपनी पुस्तक ''मिथिला त्त्व विमर्श'' में लिखते है कि पंजी में मैथिल ब्राह्मणों के 168 मूल तथा 19 गोत्र उल्लिखित हैं।[16] पंजी प्रबंध में चार भागों (श्रोत्रिय, योग्य, पंजीब, जयबार) में वर्गीकृत सारे मैथिल ब्राह्मण पूर्व कथित मूल-गोत्र के अंतर्गत ही आते हैं।

विवाह के पूर्व पंजीकार की विवाह-अनुमति (Marriage Permit) आवश्यक है। वह वर तथा कन्या पक्ष के मूल-गोत्र एवं वंशावली की गहन जाँच करने के उपरांत ताड़-पत्र पर अपना हस्ताक्षर युक्त विवाह अनुमति लिखकर प्रदान करता है।[17] इस अनुमति पत्र को मैथिली भाषा में सिद्धांत कहा जाता है। इस नयी वैवाहिक व्यवस्था से पंजीकार के अतिरिक्त एक और वर्ग ''घटक'' (Marriage Contract) अस्त्तित्व में आया। उसका कार्य था कन्या के लिए वर और वर के लिए कन्या की खोजकर विवाह करवाना। इस नयी पंजी व्यवस्था ने सपिंड और सगोत्रीय विवाह को निषिद्ध कर दिया। इसने विवाह की वैदिक परम्परा को समाप्त कर दिया।

कालान्तर में पंजी प्रबंध ने मैथिल ब्राह्मण के वैवाहिक संबंध में कई अनियंत्रित विकास ला दिये। इससे वर्ण के अंतर्गत ही वर्ण भेद का समावेश हो गया। मैथिल ब्राह्मणों में अपनी-अपनी श्रेणी का प्रमाद व्याप्त हो गया। जयबार सबसे निम्न समझे जाने लगे। पंजी प्रथा कई वैवाहिक कुरीतियों की जननी बन गई।

डॉ0 दीप नारायण मिश्र ''मिथिला राज्य कि एक'' में लिखते है, ''1907 ई. के दरभंगा जिले के गजेटियर के अवलोकन से इस बात का पता लगता है कि उच्च कुल का धनहीन व्यक्ति निम्न कुल की बालिका के संग वैवाहिक संबंध स्थापित करता था।[18] कुलीनता के सम्मोहन में फँसा कन्या का पिता इसके लिए भारी कीमत चुकाता था। इस प्रकार के विवाह से धन उपार्जित करने वालों का समाज में एक नया वर्ग बन गया, जिसे कालांतर में ''बिकौआ'' कहा जाने लगा। ऐसे लोग रुपये और धन के लोभ में निम्न कुल के परिवार की बालिकाओं के साथ अनगिनत शादियाँ करते थे। विवाहोपरांत ऐसी बालिकाएं अपने मायके में ही माता-पिता के साथ शेष जीवन यापन करने के लिए अभिशप्त थीं।[19]

एक ही वर्ण के अंतर्गत श्रेणीबद्धता के फलस्वरूप कुलीन ब्राह्मणों का महत्त्व इतना अधिक बढ़ गया कि वह उम्र के अंतिम सोपान पर आरूढ़ होते-होते पचास-पचास विवाह तक कर लेता था।[20] परिणाम यह होता था कि एक पति के मृत्योपरांत कई विभिन्न उम्र की स्त्रियों के प्रारब्ध में वैधव्य योग का अनायास ही समावेश हो जाता था।

बाल-विवाह का प्रचलन इतना अधिक बढ़ गया कि बालिकाएँ रजस्वला होने के पूर्व ही व्याह दी जाती थीं।[21] उन्हें न तो पति चयन की स्वतंत्रता थी और न ही विरोध करने का कोई अधिकार। ठीक इसके विपरीत बहुत अधिक मामले में कुलीन ब्राह्मणों के लिए बाल विवाह का प्रचलन कोई मायने नहीं रखता था। ऐसे कुलीन अपनी बालिकाओं का विवाह तब तक नहीं करते थे, जब तक उन्हें अपनी पुत्री के विवाह हेतु दहेज के रूप में पर्याप्त राशि नहीं मिल जाती थी।[22] स्वाभाविक था कि अकुलीनश्रेणी के ब्राह्मण ही कुलीनता के सम्मोहन में आवृत होकर इतनी अधिक रकम देते थे।

बाल-विवाह की भयानक कुरीति से निजात दिलाने के लिए तीसरे दशक के अंत में ''शारदा एक्ट'' पास किया गया। इसमें प्रावधान था कि चौदह वर्ष से कम वर्ष की कन्या एवं अठारह वर्ष से कम वर्ष के अवयस्क बालक का विवाह कानूनन अपराध होगा। इसको पुरानपंथी ब्राह्मणों ने अपनी संस्कृति और सामाजिक व्यवस्था में सरकारी हस्तक्षेप माना तथा चार वर्षीय अबोध और स्तनपायी बालिकाओं तक का विवाह पचास-साठ वर्षीय वृद्धों के साथ कर दिया गया।[23] लोगों को ऐसा भय हो गया कि कानून के अस्त्तित्व में आते ही उन्हें दंडित किया जायेगा।

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

ततकालीन मैथिल समाज में कुलीनों का महत्त्व इतना अधिक बढ़ गया था कि अशिक्षित और मूर्ख होते हुए भी यदि किसी का जन्म कुलीन परिवार में हुआ है तो वह श्रद्धा और आदर का पात्र होता था'।[24] बाल विधवाओं की संख्या अत्यधिक बढ़ गई थी। परन्तु विधवा विवाह सामाजिक रूप से निषिद्ध था। अत: विधवाएँ पुन: विवाह तो नहीं कर सकती थीं। दूसरा वे इतने कठोर नियम के अंतर्गत शेष जीवन जीने को अभिशप्त थीं कि मृत्युवरण उससे बहुत आसान था। 'बंगाल में समाज सुधार आंदोलन के फलस्वरूप अंग्रेजों के द्वारा विधवा विवाह को कानूनी जामा पहनाने का भी कट्र मैथिल ब्राह्मणों के ऊपर कोई असर नहीं पड़ा।[25] इस क्षेत्र में यह प्रथा आज भी कुछ अपवाद को छोड़कर अपने पूर्व रूप में विद्यमान है।

बहु-विवाह के कारण पति अपनी पत्नियों को ससुराल में ही छोड़ दिया करते थे। पति सुख से वंचित कन्याएँ मायके में ही जीवन के सारे पतझड़ और बसंत से रू-ब-रू होती रहती थीं। वेसे प्रभुत्व तो पतझड़ का ही रहता था। पति दो अथवा तीन साल के उपरांत ही अपनी ससुराल में ससुर से बकाया की वसूली के लिए आया करते थे। ऐसे अकर्मण्य, लाचार, निराशक्त, असमर्थ, अशिक्षित, अयोग्य कुलीन (बिकौआ) पति की सारी उम्र एक ससुराल से दूसरी ससुराल में भ्रमण करते हुए कट जाती थी। कदाचित किसी भी पितृसत्तात्मक परिवार में पुरुष का ऐसा वर्चस्व और स्त्रियों की ऐसी त्रासदी का दृष्टांत नहीं मिलता होगा।

''पंजी प्रथा'' ने वर्तमान मधुबनी जिले के सौराठ नामक गाँव में वर-कन्या के विवाह प्रयोजनार्थ ''सभागाछी'' नामक एक दुर्लभ विवाह-संस्था को अस्त्तित्व में ला दिया। इसमें घटक (MaRriage Contractor) एवं पंजीकार (MaRriage registrar) की सक्रियता अत्यधिक बढ़ गई। डॉ0 दीपनारायण मिश्र के अनुसार इसका प्रारंभ 1310 ई. में हुआ था। कई एकड़ में फैली हुई ''सभागाछी'' में पीपल और आम्र के वृक्षों की बहुतायत है। अंतिम आषाढ़ के महीने में सभागाछी मिथिला पंचांग के अनुसार कम-से-कम एक सप्ताह के लिए प्रत्येक वर्ष लगती है। इसमें कन्या के अभिभावक तथा वर समेत उसके अभिभावक आते हैं तथा घटक के माध्यम से वैवाहिक संबंध तय करते हैं। वहीं पंजीकार को तय शुल्क देकर कन्या तथा वर पक्ष के लोग विवाह सहमति पत्र प्राप्त करते हैं तथा घर पर आकर वैवाहिक प्रक्रिया पूरी की जाती है। कभी-कभी जब एक ही वर पर कई कन्यागत आ जाते हैं तो आपस में ही नीलामी वाली बोली शुरू हो जाती है तथा उच्चतम बोली लगाने वाले कन्यागत के यहाँ विवाह तय होता है। दहेज रूपी दानव के आकार को बड़ा बनाने में इस संस्था की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। वास्तव में विश्व की किसी भी संस्कृति में ऐसी अदभुत विवाह संस्था के अस्त्तित्व में होने का प्रमाण नहीं मिलता है। वैसे आधुनिक परिप्रेक्ष्य में ''सभागाछी'' नामक विवाह संस्था द्रुत गति से अपनी प्रासंगिकता खोती चली जा रही है।

इस प्रकार पंजी प्रबंध ने मैथिल ब्राह्मणों में बाल-विवाह से बेमेल विवाह, बहुविवाह, कन्या विक्रय, वर विक्रय, वृद्ध विवाह, दहेज प्रथा इत्यादि कुरीतियों को जन्म दिया।

यह बात कई बार लिखी जा चुकी है कि मिथिला के मैथिल ब्राह्मणों का विवाह संस्कार अदभुत और निराली रीति से पूर्ण होता है। विवाह के पश्चात नवविवाहिता कन्याओं के लिए वर्ष भर विवाह से संबंधित पूर्व एवं त्यौहार आते रहते हैं । नागपंचमी, बट सावित्री, मधुश्रावणी, कोजगरा इत्यादि इसी कड़ी के पर्व हैं।

श्रावण के महीने को धर्म-कर्म के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसी धर्म मास में नागपंचमी से प्रारंभ होकर चौदह दिनों तक लगातार चलने वाले पर्व का नाम ही मधुश्रावणी है। नवविवाहिता के द्वारा पूर्ण किया जाने वाला यह एक महाअनुष्ठानिक क्रिया है।

इस अनोखी सांस्कृतिक परंपरा में नवविवाहित कन्याओं की शुचिता को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। इसमें शुद्ध भोजन करने का विधान है, वह भी सूर्य के अस्ताचलगामी होने के पूर्व ही। क्योंकि रात्रि भोजन वर्जित है। इसमें नवविवाहिता नित्य सुबह में दैनिक क्रिया से निवृत्त होकर तथा ससुराल से आये नव परिधान में सजकर गौरी पूजा करती है। त्तपश्चात मधुश्रावणी पर्व से संबंधित गाँव की प्रौढ़वय सधवा स्त्री से कथा

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

सुनती है। यह क्रम लगातार चौदह दिनों तक चलता रहता है। प्रथम दिन से लेकर चौदह दिनों तक क्रमशः कथा का प्रसंग बदलता रहता है। ये कथाएँ क्रमानुसार है:-

प्रथम दिन-मौना पंचमीक कथा, दूसरे दिन-बिहुलाओं मनसाक कथा, बिसहराक कथा, मंगला गौरीकी कथा, तीसरे दिन- पृथ्वीक जन्म, समुन्द्र मंथन, चौथे दिन-सतीकी कथा, पतिव्रताकी कथा, पाँचवे दिन-दंत कथा पर आधारित महादेव का परिवारक कथा, छठे दिन-गंगाकी कथा, गौरीकी जन्म, काम दहन, सातवें दिन-गौरीक तपस्या, आठवें दिन-गौरीकी विवाहकी वर-वरियाती, नवम दिन-मैनाक मोह भंग, गौरीकी विवाह, दसवें दिन- कार्तिकके जन्म, गणेशके जन्म, गौरीके (नाग) दन्त कथा, विदाइकी भार, गौरीक ननदि, गौरी के भागिन, गौरी चोरनी, ग्यारहवें दिन-संध्याक विवाह आ लीलीकी जन्म, लीलीक विवाह, पतिव्रता सुकन्याक कथा, बारहवें दिन बाल बसंत, गोसाउनिक कथा, चुनाइओं बैरसी, गोसाउनिक देह फारब, तेरहवें दिन-राजा श्रीकरकी कथा, चौदहवें दिन-श्रीगणेशजीक सोहाग मथव आ बाँटव।[26]

दिन के तृतीय प्रहर में एक गाँव अथवा टोले अथवा मुहल्ले की मधुश्रावणी व्रत करने वाली नव व्याहताएँ नव परिधानों, आभरणों से आवृत होकर समवेत रूप में बाग-बगिया, पुष्प वाटिकाओं, अमराइयों इत्यादि स्थानों से पुष्प-पत्र एवं वनस्पतियां एकत्र करती हैं एवं लौटकर घर के एक निश्चित स्थान पर द्धजहाँ नित्य पूजा की प्रक्रिया संपन्न की जाती है) उन्हें सजाकर रखती हैं। अंतिम दिन पूजा-पाठ की क्रिया संपंन होने के पश्चात् पुष्प-पत्र एवं वनस्पतियाँ जलप्लाबित कर दी जाती है।

इसी दिन नवोढ़ा पटवर्तिका-दग्धीकरण जाग[27] का आयोजन होता है। इस परंपरित एवं धार्मिक विधान के अंतर्गत नवव्याहता कन्या को टेमी (घी में भींगी हुई बाती) के द्वारा दागा जाता है।

इस आयोजन के निमित्त एक सरबा (मृदा का छोटा कटोरीनुमा पात्र), पाँच टेमी (बाती) सात आरतक पात्र, सात पान के पत्ते तथा घी को आवश्यकता होती है। वर अपने दोनों हाथ में एक आरतक पत्ता तथा एक पान का पत्ता (पान तथा आरतके पत्ते को हथेली पर इस प्रकार से रखा जाता हे, ताकि पान का पत्ता अंदर हो) लेकर कन्या के दोनों आँखों को ढक देता है। विधकरी (प्रक्रिया संपन्न करने वाली स्त्री) पाँचां पान तथा आरतके पत्ते को एक दूसरे के उपर रखकर सबके बीच में इतना छेद करती है, ताकि उन्हें कन्या के पाँचों अंगों पर रखे जाने के पश्चात् चमड़ा स्पष्ट रूप से दिखाई पड़े। अब विधकरी पान एवं आरतक पत्ते के पाँचों सेर को कन्या के दोनों घुटने, दोनों पैर तथा बायें हाथ के लुल्लुहा (हथेली के पीछे का भाग) पर चिपका देती है। त्तपश्चात् वह घी में भींगी हुई पाँचों जलती हुई टेमी (बाती) को पूर्व कथित सभी अंगों पर रखे पान तथा आरत पत्ते के सेर के छेद पर साट देती है।[28] ध्यान रखा जाता है कि दग्धीकरण से फोड़ा बन जाये।

मधुश्रावणी के शास्त्रीय सिद्धांत को पुष्ट करते हुए डॉ0 राम किशोर झा ''विभाकर'' दो शास्त्रीय वचन को उद्धृत करते हुए लिखते हैं, श्रावण में नवोढ़ा अपने पति परमेश्वर के साथ नाग की पूजा करें-यह शास्त्र सम्मत प्रथा है। उसी प्रकार श्रावण शुक्ल तृतीया किंवा पंचमी में नारी टेमी (जलती बाती) के द्वारा दग्धीकरण क्रिया अपनाकर आत्म शुद्धि तथा सद् भाग्य लाभ करें-यह शास्त्रनुमोदित कर्म है।''

नागान् संपूज्य यत्नेत पतिना सह श्रावणे।
तप्तायसेन चक्रेण ज्वल द्वत्तिक्रयापि वा।।
तापयित्वा स्वागात्रणि सर्वशुद्धिमवाप्य च।
सौभाग्यमतुलं भक्त्वा पतिलोकमवाप्नुयात।। (यामलोक्त) अपिच,
श्रावणे शुक्ल पंचम्यां तृतीयायामथापि वा।
अंकिता पटवत्तिभ्यां संस्कृता सर्वकर्मसु।। (पंचरात्र)

मधुश्रावणी की शास्त्रीय और पौराणिक मान्यताओं को और अधिक परिपुष्ट करते हुए डॉ0 राम किशोर झा 'विभाकर' इसमें वैज्ञानिक एवं चिकित्सकीय आयाम देते हैं। वे बताते हैं, 'नारी का सौन्दर्य उसके

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

समुन्नत उरोज से निर्धारित होता है। अत: उक्त स्थान (दग्धीकरण के स्थान) में प्रेशर, शल्यक्रिया अथवा अग्निदाह के द्वारा उसका सम्यक विकास सुनिश्चित किया जाता है'।[29]

कुछ स्त्रियाँ मधुश्रावणी में अपनायी जाने वाली दग्धीकरण की प्रक्रिया का आधार एक पौराणिक कथा को मानती हैं। कहा गया है कि राजा दुष्यंत वन्य प्रांतर में ऋषि कन्या शकुंतला से गंधर्व विवाह करने के पश्चात् अपनी राजधानी लौट आये। वर्षों बीत गये। पर उन्हें शकुंतला की सुधि नहीं आयी। व्याकुल आर विरहिणी शकुंतला अपने पति से उनके राजधानी में आकर मिली। पर राजा दुष्यंत ने उसे पहचानने से यह कहकर इंकार कर दिया कि क्या उसके पास विवाहित होने का प्रमाण स्वरूप कोई चिह्न है। उसी दिन से दग्धीकरण की प्रक्रिया अपनायी जाने लगी। इसलिए कि उसका स्थायी चिह्न देह पर अंकित हो सके।

वैदिक विवाह पद्धति में मधुश्रावणी नामक पर्व का कोई उल्लेख नहीं मिलता है तथा न तो इतिहास के उस कालखंड में नवविवाहिता को दग्धीकरण रूपी अमानवीय कृत्य से ही रू-ब-रू होना पड़ता था। क्योंकि यह सर्वविदित है कि नर और नारी के लिए सामाजिक भेदभाव का रूप वैसा नहीं था, जैसा कि मध्यकाल के आते-आते हो गया। इसी काल में मैथिल ब्राह्मणों के लिए पंजी प्रबंध, अलग पंचांग कर्मकांड, वैवाहिक पद्धति का निर्माण हुआ। यहीं से समाज में स्त्रियों की त्रासद स्थिति और निरसर बनाने का दौर आरंभ हुआ। पर्दा-प्रथा अस्त्तित्व में आया उनकी शिक्षा पर प्रतिबंध लग गया। उनकी स्थिति पिंजरे में बंद परवश परिंदा सरीखी हो गई। उन्हें घर की चहारदीवारी के अंदर की शोभा बनाकर रख दी गई। इतना ही नहीं, स्त्रियों की स्वतंत्रता पर पाबंदी लगाने के लिए धार्मिक आचार संहिता का प्रणयन किया गया। समय क उस अतीत में जीवन के प्राय: हर क्षेत्र को धर्म से जोड़ने का प्रयास इसलिए किया गया कि समाज धर्मभीरू था। अत: धर्म के द्वारा इस कठोर और बर्बर प्रथा को अस्त्तित्व में लाया गया, ताकि वर्चस्ववाद के विस्तृत आकाश में दग्धीकरण रूप एक शक्तिशाली ग्रह का प्रभामंडल स्थापित किया जा सके। यह वर्चस्व के अलग-अलग हथकंडों में से एक साबित हुआ। धर्मभीरू मैथिल ब्राह्मणी ने अपने सौभाग्य और पति के चिरंजीवी होने के लोभ में पुरुष द्वारा रचित इस दुखदायी प्रथा को आत्मसात कर लिया तथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी इसका अनुकरण करती चली गई।

समय के बदलते परिवेश में दग्धीकरण की क्रिया में वैज्ञानिक एवं चिकित्सकीय दृष्टिकोण को ढूँढ़ना भी भ्रांत धारणा और अंधविश्वास की पृष्ठभूमि पर वर्चस्ववाद की अवधारणा को स्थायी बनाये रखने का एक और कुत्सित प्रयास है।

दग्धीकरण (अग्निदाह) के द्वारा उन्नत उरोज की अवधारणा का यथार्थ से दूर-दूर तक कोई संबंध नहीं है। क्योंकि यदि ऐसा संभव होता तो इसके बचाव में चिकित्सक और वैज्ञानिक सामने होते। सबसे बड़ा प्रमाण तो स्वयं भोक्ता नवविवाहिताएँ हैं, क्योंकि आज तक किसी स्त्री को दग्धीकरण से पुष्ट उरोज होने की अनुभूति नहीं है।

अगर पौराणिक कथा (राजा दुष्यंत एवं शकुंतला) को ही इसका आधार माना जाय तो प्रागैतिहासिक कालीन इस घटना के तुरन्त पश्चात् ही यह प्रथा अस्त्तित्व में क्यों नहीं आ गई? सैकड़ों वर्ष के पश्चात् मैथिल विवाह-पद्धति के बाद से ही इसका आविर्भाव क्यों हुआ?

अब मधुश्रावणी की पीड़ापरक स्थिति को दर्शाते हुए कुछ लोकगीतों का अध्ययन यहाँ किया जा रहा है-

कदलिक दल सन घर-घर काँपए
मधुश्रावणी विधि आजए
सकल श्रृंगार सम्हारि सजनि सब
मधुमय सकल समाजे
कमलनयन पर पानक पर दय
नागार जखनहे झाँपए
वध करी हाथ कमल कर बाती

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

देखि सगर तन काँपए
आजु साहागिनि सह मिलि बइसल
मुख किए पड़ल उदासे
कुमर नयल सँ नीर बहाबह
गाइन गावतु गीते
बड़ अजगुत थिक मधुश्रावणी विधि
परम कठिन एहो रीते

आज मधुश्रावणी का त्योहार है, लेकिन नवव्याहता व्रती का गात केले के पत्ते की भाँति काँप रहा है। उसका पति पान के पत्ते से उसके (पत्नी) दोनों नयनों को ढँक देता है और उसके बद्ध कर-कमलों में जलती हुई बाती दी गई, तब उसको अंग-प्रत्यंग काँप उठा। आनंद मस्त सहेलियों के बीच नवविवाहिता उदास बैठी है, मंगल गान गा रही है, लेकिन उसकी आँखों से निरंतर अश्रु वृष्टि हा रही है।

चूँकि टेमी (दग्धीकरण) का आयोजन कोहबर के घर में ही होता है। अत: नवविवाहिता वहाँ अपने वर के साथ उपस्थित है। उसकी सखी सहेलियाँ वहाँ आनंदोत्सव में लीन हैं। पान के पत्ते से उसकी आँखें बन्द कर दी जाती हैं तथा सुहागिन स्त्रियाँ उसके हाथ को जार से पकड़ लेती हैं। इसलिए कि उसे आसानी से दागा जा सके। उसकी आँखों से मोती की तरह आँसू बहने लगते हैं तथा उसका चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख सूज जाता है। और इस विधि में उसका पति ही उसे दगवाता है क्योंकि पान से तो उसकी आँखें उसी ने ढँक रखी हैं। दागन की इस प्रथा के पीछे का सांकेतिक कारण यही है नारी के अवचेतन में इस भाव को भरना कि पति ही उसका नियंता है। वह चाहे तो उसे बचा सकता है या फँसा सकता है। इसलिए हर हाल में उसका समर्पण अपने पति के प्रति होना चाहिए।

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद पर महिलाओं के दृष्टिकोण

समाज में होने वाले विभिन्न सांस्कृतिक क्रियाकलापों का उद्देश्य यही होता है कि महिलाएँ उसमें अपनी प्रतिभागिता कैसे दर्ज कराती हैं, उसको कैसे अपनाती हैं तथा उसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी किस प्रकार हस्तांतरित करती हैं, क्योंकि जब से समाज की स्थापना हुई है तब से महिलाओं से ही उम्मीद की जाती है कि सांस्कृतिक प्रथाओं का सफलतापूर्वक निर्वहन करेंगी।

इसके लिए दरभंगा जिले का सर्वेक्षण किया गया है तथा विभिन्न स्थानों पर जाकर प्रस्तुत 35 महिलाओं से जो अलग-अलग कार्यक्षेत्र से संबंध रखती हैं, उनका साक्षात्कार लिया गया है तथा जो जवाब मिले हैं। उनके आधार पर उत्तर को ग्राफ बनाकर दर्शाने की कोशिश की गई है। ग्राफ में आयु तथा शिक्षा का औसत निकालकर प्रदर्शित किया गया है। शोध कार्य में कुल 14 ग्राफ के माध्यम से मिथिला समाज में पुरुष वर्चस्व को दिखाने की चेष्टा की गई ह परंतु यहाँ सम्पूर्ण ग्राफ को दर्शाना संभव नहीं है अत: कुछ महत्त्वपूर्ण ग्राफ दिए जा रहे हैं।

विशिष्ट विवरण:- उपर्युक्त ग्राफ में अधिकतर स्त्रियों ने दागने की प्रथा को पति की लम्बी आयु का द्योतक माना जबकि कुछ स्त्रियों ने इसे लम्बी आयु का प्रतीक नहीं माना है। दो स्त्रियों को इस विषय में कुछ पता नहीं था।

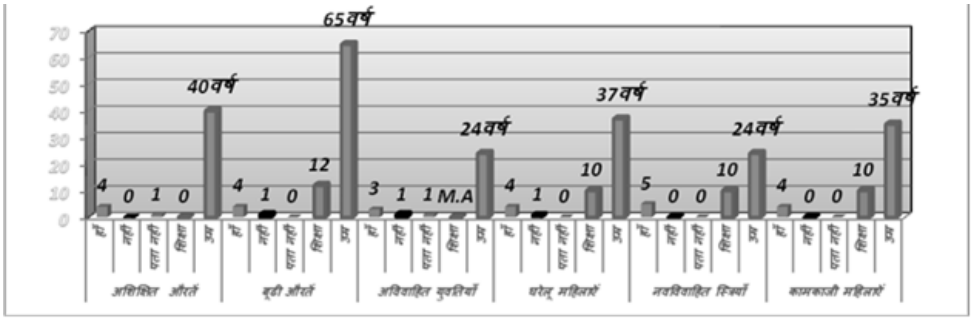

निष्कर्ष

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

सांस्कृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाएँ (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में)

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

इस शोध के विषय 'सांकृतिक वर्चस्ववाद और मिथिला की महिलाऐं (कुछ प्रथाओं के संदर्भ में) को चुनने का उद्देश्य यह था कि मिथिला क्षेत्र के एक प्रमुख स्थान 'दरभंगा' जिले की सांस्कृतिक वर्चस्ववाद से पीड़ित महिलाओं का अध्ययन करने का मौका मिला। इस शोध से प्राप्त निष्कर्ष हमारा ध्यान वर्चस्ववाद के सूक्ष्म रूपों के तरफ आकृष्ट करता है।

ब्राह्मण समुदाय जिन्हें समाज में उच्च स्थान प्राप्त है। वही उच्च कहे जाने वाले लोग सांस्कृतिक वर्चस्ववाद के माध्यम से अपने ही घरों की स्त्रियों के प्रति संकुचित दृष्टिकोण रखते हैं। यह तथ्य हमारे निष्कर्ष को इस दिशा में ले जाता है कि यह समाज सांस्कृतिक रूप से काफी रूढ़ है तथा वर्चस्व का रूप अति भीषण एवं कठोर है। इस शोध के पश्चात आये निष्कर्ष ने मेरी संकल्पना को ध्वस्त कर दिया, जहाँ मुझे लगता था कि मधुश्रावणी या विभिन्न व्रत, त्योहार जिसमें महिलाओं की अधिकतम संख्या होती है। वे लोग भी सांस्कृतिक वर्चस्वाद के लिए उतने ही जिम्मेदार हैं जितने पुरुष वर्ग। परंतु निष्कर्ष से यह ज्ञात हुआ है कि उनके ऊपर वर्चस्व स्थापित करके सहमति जबरन हासिल की जाती है।

इस शोध से प्राप्त निष्कर्ष स्वभाविक और अनिवार्य रूप से यह इंगित करता है कि मिथिला समाज पर अंतोनियो ग्राम्शी के सांस्कृतिक वर्चस्ववाद का सिद्धांत हशिए पर डाल दी गई महिलाओं के संदर्भ में सबसे मुफीद है। मिथिला में संस्कृत की शिक्षा विद्यालयों में अपने केंद्रित रूप के अतिरिक्त रूप में गाँव के दालानों पर भी अहर्निश चला करते थे। अतएव इस शिक्षा पद्धति ने स्त्री तथा पुरुषों को कूपमंडूक बना दिया। वे समकालीन शिक्षा और संस्कृति के प्रति तटस्थ बने रहे। डॉ0 नीता झा 'सामाजिक असंतोष ओ मैथिली साहित्य' में यह उचित ही लिखतो हैं कि 'लार्ड डलहौजी के काल में जो शिक्षा का प्रसार हुआ था, उसका प्रकाश पुंज मिथिला तक नहीं पहुँच सका। इसका ऐसा ऋणात्मक प्रभाव पड़ा कि वे लोग नव वैश्विक ज्ञान के आयाम से काफी पीछे छूट गए। ज्ञान के विकास की गति अत्यंत ही शिथिल हो गई। उनके विचार और व्यवहार की सरिता धर्मशास्त्रीय सागर में ही समाहित होती रहीं।

मिथिला का पुरुष प्रधान समाज जीवन के मौलिक स्वरूप से पृथक होकर संकीर्णतावाद का एक अंग बन गया तथा स्त्री उपांग संकीर्ण मानसिकता ने सर्वतोमुखी विकासात्मक चेतना की धार कुंद कर दी। इसका घातक परिणाम यह हुआ कि संसार में सामाजिक क्रांति के फलस्वरूप जीवन के क्षेत्र में हुए सकारात्मक बदलाव और व्यापक दृष्टिकोण को मैथिल ब्राह्मणों ने अपसंस्कृति (धर्म भ्रष्ट करने वाली संस्कृति) कहकर तिरस्कृत किया। मैथिल संस्कृति बचाने के लिए 'पंजी-प्रबंध' की स्थापना हुई जिसमें ब्राह्मणों को श्रेणियों में बाँटा गया था एवं अपनी ही जाति तथा विपरीत गोत्र में विवाह करने की व्यवस्था हुई । 'पंजी-प्रबंध' में रक्त की शुद्धता का महत्त्व बढ़ गया। फलत: स्त्रियों की गतिशीलता, यौनिकता तथा स्वतंत्रता पर इसका भयानक प्रभाव पड़ा।

मिथिला की इतनी विशालतम संस्कृति होने के बावजूद कर्णाट शासक हरिसिंह देव के द्वारा स्थापित पंजी-प्रबंध ने इस क्षेत्र में वैदिक युग से स्त्रियों को प्राप्त सारी स्वतंत्रता छीन ली। 'पंजी-प्रबंध' की वजह से अपनी ही जाति तथा विपरीत गोत्र में विवाह करने के लिए बाध्य हो गई। दूसरी तरफ मिथिला की संस्कृति को अन्य संस्कृतियों (बौद्ध संस्कृति, इस्लाम प्रभावित संस्कृति तथा इसाई संस्कृति) के दुष्प्रभाव से बचाने के लिए यहाँ के राजा हरिसिंह देव के आश्रित विद्वानों के द्वारा कठोर संहिता, धर्म शास्त्रीय पद्धति तथा विभिन्न लोक प्रथाओं के निर्माण ने धार्मिक कट्रता को बढ़ावा दिया। जिसका शिकार महिलाओं को बनना पड़ा और उन्हें चहारदीवारी रूपी पिंजरे में हमेशा के लिए कैद कर दिया गया। पर्दा-प्रथा, बालविवाह, सती-प्रथा ने भी अपने पैर फैला लिए थे। मधुश्रावणी में दागने की रस्म हो, दहेज की प्रथा हो, या द्विरागमन हो, महिलाओं को ही सदा इसे अपनाने के लिए बाध्य किया जिससे उनकी स्थिति दासी जैसी त्रासद और दयनीय हो गई। बंधुआ मजदूर और उनमें कोई अंतर ना रह सका। धीरे-धीरे पुरुषवादी वर्चस्व की फसल मिथिला में विभिन्न कुरीतियों के माध्यम से लहराई जिसका खामियाजा महिलाओं को भुगतना पड़ा। महिलाओं को अन्य संस्कृतियों से अपवित्र होने का भय दिखा कर पुरुष वर्चस्ववादी प्रभाव में ले लिया गया। उनके अभ्यंतर में यह भावना भर दी की इस नई मैथिल सामाजिक व्यवस्था में ही उनका जीवन सुरक्षित है तथा पुरुष के अधीन रहने में

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

चित्रलेखा अंशु

शोध छात्रा, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

ही उनकी भलाई है। आने वाली पीढ़ी को फिर महिलाओं द्वारा ही पुरुष वर्चस्व को सहने के लिए तैयार करने की सांस्कृतिक राजनीति आज भी मैथिल समाज में मौजूद है। जिसे ना तो कोई तोड़ना चाहता है और ना ही किसी में उसे चुनौती देने की हिम्मत है।

अंत में एंगेल्स द्वारा कही गई बात फिर से जेहन में उभर आती है कि पुरुषों द्वारा सत्ता को बलात हथिया लेने से 'इतिहास में फिर से महिलाओं की हार हो गई है'। मिथिला के इतिहास में बार-बार महिलाओं को पुरुषसत्ता द्वारा मिली हार से कैसे निजात मिलेगी? इस प्रश्न का उत्तर यह हो सकता है कि सांस्कृतिक वर्चस्व से महिलाओं को मुक्ति तभी मिलेगी जब नई पीढ़ी के मन-मस्तिष्क में भेद-भाव तथा वर्चस्व से रहित, बराबरी के बीज बोए जाएं। इस प्रक्रिया से शनैः शनैः सांस्कृतिक वर्चस्ववाद को मिटाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः-

1. मिश्र, कृष्णकांत, ग्राम्शी, अंतानियो, अनु. 'आधुनिक राजकुमार' (समीक्षा)
2. मिश्र, कृष्णकांत, ग्राम्शी, अंतोनियो, अनु. सांस्कृतिक और राजनीतिक चिंतन के बुनियादी सरोकार' (पृ.366)
3. मिश्र, कृष्णकांत, ग्राम्शी, अंतोनियो, अनु. सांस्कृतिक और राजनीतिक चिंतन के बुनियादी सरोकार' (पृ.12)
4. Eagleton, Terry, 'Marxism and Litrature; truly pathbreaking'; pp.108
5. Eagleton, Terry, 'Ideology and Introduction'; pp.112
6. 'आलोचना, पत्रिका में एजाज अहमद का लेख 'संस्कृति और भूमंडलीकरण' अंक जुलाई-सितंबर -2001
7. आर्या, साधना, मेंनन, निवेदिता, लोकनीता, जिनी,'नारीवादी राजनीति (संघर्ष एवं मुठे में उमाचक्रवर्ती के द्वारा लिखा गया पितृसत्ता पर एक नोट नामक आलेख (पृ.-4)
8. आर्या, साधना, मेंनन, निवेदिता, लोकनीता, जिनी,'नारीवादी राजनीति (संघर्ष एवं मुठे में उमाचक्रवर्ती के द्वारा लिखा गया पितृसत्ता पर एक नोट नामक आलेख (पृ.-4-5
9. झा, नीता, 'सामाजिक असंतोष ओ मैथिली साहित्य' (पृ.20)
10. मिश्र, पंचानन, 'मैथिली समाज' (पृ.89)
11. मिश्र, डॉ0 दीप नारायण, 'मिथला राज्य कियेक' (पृ.4)
12. झा, महामहोपाध्याय, परमेश्वर, 'मिथिला त्त्व विमर्श' (पृ.83)
13. Thakur, Upendra, 'History of Mithila; PP.403
14. Thakur, Upendra, 'History of Mithila; PP.362
15. झा, महामहोपाध्याय, परमेश्वर, 'मिथिला त्त्व विमर्श' (पृ.83-84)
16. Thakur, Upendra, 'History of Mithila; PP.362
17. 'मिथिला त्त्व विमर्श' (पृ.85)
18. Thakur, Upendra, 'History of Mithila; PP.362
19. मिश्र, डॉ0 दीप नारायण, 'मिथला राज्य कि एक' (पृ.54)
20. वही.(पृ.सं.55)
21. वही.(पृ.सं.54)
22. Thakur, Upendra, 'History of Mithila; PP.362
23. Ibid; PP.-403
24. झा, नीता, 'सामाजिक असंतोष ओ मैथिली साहित्य' (पृ.-33
25. Thakur, Upendra, 'History of Mithila; PP.404
26. Thakur, Upendra, 'History of Mithila; PP.362
27. विभागार, झा डॉ0 राम किशोर' तथा झा, श्रीमती कल्पना, तथा मिथिलाक व्रत आ पाबनि-तिहार, (पृ.14-58) मधुश्रावणी मीमांसा, (पृ. 182-332)
28. विभागार, झा डॉ0 राम किशोर' तथा झा, श्रीमती कल्पना, मधुश्रावणी मीमांसा, (पृ.12) तथा मिथिलाक व्रत आ पाबनि-तिहार, (पृ.13)
29. 'विभागार, झा डॉ0 राम किशोर' मधुश्रावणी मीमांसा, (पृ.2-3)
30. वही (पृ.सं.35)

शोध संचयन SHODH SANCHAYAN